उत्तराखंड उच्च न्यायालय नैनीताल

24 नवंबर, 2022

माननीय श्री न्यायमूर्ति मनोज कुमार तिवारी

2021 की रिट याचिका (प्रकीर्ण स. 2554)

श्रीमती विमलेश पाठक एवं अन्य .... याचिकाकर्तागण

(याचिकाकर्तागण के अधिवक्ता श्री नीरज गर्ग)

बनाम

आशीष गोविंद प्रसाद व अन्य .... प्रत्यर्थीगण

(प्रत्यर्थीगण के अधिवक्ता श्री शंकर अग्रवाल)

निर्णय

इस रिट याचिका के माध्यम से, याचिकाकर्तागण ने 2003 के मूल वाद संख्या 766 में द्ितीय अपर सिविल जज (सीनियर डिवीजन), देहरादून द्वारा पारित आदेश दिनांकित 22.11.2021 को चुनौती दी है। उक्त आदेश द्वारा, याचिकाकर्ता सं० 4 द्वारा दायर आवेदन, वादी सं० 3 के रूप में वादपत्र पर हस्ताक्षर करने की अनुमति और वादी सं० 2 और वादी सं० 1/1 और 1/2 के मुख्तारनामा धारक के

रूप में भी वादपत्र पर हस्ताक्षर करने की अनुमति को निरस्त कर दिया गया था।

2. पक्षकारों के अधिवक्तागण को सुना और अभिलेख का अवलोकन किया। यह पता चला है कि सत्य प्रकाश पाठक, ओम प्रकाश पाठक और मानव पाठक द्वारा प्रतिवादियों के खिलाफ स्थायी निषेधाज्ञा के लिए एक वाद दायर किया गया था, जो विद्वान सिविल जज (सीनियर डिवीजन), देहरादून के समक्ष लंबित है। सत्य प्रकाश पाठक और ओम प्रकाश पाठक, जो वादी नंबर 1 और 2 हैं, भाई हैं; जबकि, मानव पाठक (वादी नंबर 3) वादी नंबर 1 और 2 के सबसे छोटे भाई का बेटा है।

3. सत्य प्रकाश पाठक (वादी सं० 1) की वाद लंबित रहने के दौरान मृत्यु हो गई और उनके कानूनी प्रतिनिधियों को उनके स्थान पर प्रतिस्थापित किया जाता है, जो याचिकाकर्ता सं० 1 और 2 हैं; जबकि, अन्य वादी इस रिट याचिका में याचिकाकर्ता संख्या 3 और 4 के रूप में शामिल हैं। मानव पाठक (वादी संख्या 3) ने 30.10.2021 को अधीनस्थ न्यायालय के समक्ष एक आवेदन दायर किया, जिसमें वादी सं० 3 के रूप में और वादी सं० 2 के अभिकर्ता और वादी सं० 1 के कानूनी प्रतिनिधियों के रूप में उनके पक्ष में उनके

द्वारा निष्पादित मुख्तारनामा के बल पर वादी सं० 2 के अभिकर्ता के रूप में हस्ताक्षर करने की अनुमति मांगी गई। आवेदन में कहा गया था कि वादी सं० 2 विदेश में बसे हुए हैं और उन्होंने वादी सं० 1 को मुख्तारनामा के माध्यम से अपने अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया था और वादी सं० 1 द्वारा उनकी ओर से और वादी सं० 2 के अभिकर्ता के रूप में भी हस्ताक्षर किए गए थे। आगे कहा गया कि चूंकि वादी सं० 1 जिसने वादपत्र पर हस्ताक्षर किए थे, का निधन हो गया है और उसके कानूनी प्रतिनिधियों को वाद में प्रतिस्थापित किया गया है और वादी सं० 2 के हस्ताक्षर नहीं हैं और वादी सं० 1 के कानूनी प्रतिनिधियों ने उसे अपने अभिकर्ता के रूप में नियुक्त किया है, इसलिए, उसे वादी सं० 3 के रूप में और वादी सं० 2 और वादी सं०1/1 और 1/2 के अभिकर्ता के रूप में हस्ताक्षर करने की अनुमति दी जा सकती है। । विचारण न्यायालय ने आवेदन को निरस्त कर दिया, यह कहते हुए कि वादी सं० 3 द्वारा की गई प्रार्थना प्रमाणिक प्रतीत नहीं होती है और आगे कहा कि इस तरह के अनुरोध को इस तरह के विलंबित चरण में स्वीकार नहीं किया जा सकता है।

4. कानून में यह स्थापित स्थिति है कि प्रक्रिया के नियम न्याय की दासी हैं और उन्हें किसी भी दमनकारी या दंडात्मक उपयोग द्वारा न्याय से इनकार करने या अन्याय को बनाए रखने का उपकरण नहीं

बनाया जाना चाहिए। इस प्रकार, प्रक्रियात्मक दोष और अनियमितताएं, जिनका निवारण संभव है, को वास्तविक अधिकारों को पराजित करने या अन्याय का कारण बनने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए।

5. उदय शंकर त्रियार बनाम राम कलेवर प्रसाद सिंह और अन्य, (2006) 1 एससीसी 75 के मामले में, माननीय सुप्रीम कोर्ट ने अवधारित किया कि यदि किसी वादी या उसके विधिवत अधिकृत अभिकर्ता द्वारा किसी वास्तविक त्रुटि के कारण किसी वादपत्र पर हस्ताक्षर नहीं किए जाते हैं, तो दोष को निर्णय से पहले किसी भी समय अधीनस्थ न्यायालय द्वारा ठीक करने की अनुमति दी जा सकती है या यहां तक कि अपीलीय न्यायालय द्वारा उचित संशोधन की अनुमति देकर, जब सुनवाई के दौरान ऐसा दोष उसके संज्ञान में आता है। उक्त निर्णय का प्रासंगिक सार नीचे प्रस्तुत किया गया है: –

> "15. इस प्रकार, अब यह अच्छी तरह से तय हो गया है कि अपील के ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने में कोई दोष या अपील के ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्ति के अधिकार में कोई दोष, या अपील के साथ अपीलकर्ता द्वारा निष्पादित वकालतनामा दायर करने की चूक, अपील के ज्ञापन को अमान्य नहीं करेगी, अगर ऐसी चूक या दोष जानबूझकर नहीं किया गया है और अपीलकर्ता के ज्ञान और अधिकार के साथ अपीलीय न्यायालय के समक्ष अपील ज्ञापन पर हस्ताक्षर या उसकी प्रस्तुति थी। इस तरह

की चूक या दोष प्रक्रिया से संबंधित होने के कारण, इसे बाद में ठीक किया जा सकता है। यह सत्यापित करना कार्यालय का कर्तव्य है कि अपील के ज्ञापन पर अपीलकर्ता या उसके अधिकृत अभिकर्ता या उचित वकालतनामा रखने वाले अधिवक्ता द्वारा हस्ताक्षर किए गए थे या नहीं। यदि कार्यालय ऐसे दोष को इंगित नहीं करता है और अपील को स्वीकार कर लिया जाता है और उस पर कार्यवाही की जाती है, तो अपीलकर्ता को इसे सुधारने का अवसर दिए बिना, केवल ऐसे त्रुटि के कारण अपील की सुनवाई में अस्वीकार नहीं किया जा सकता है। यह आवश्यकता कि अपील पर अपीलकर्ता या उसके अधिवक्ता (अपीलकर्ता द्वारा निष्पादित वकालतनामा द्वारा विधिवत अधिकृत) द्वारा हस्ताक्षर किए जाने चाहिए, निस्संदेह, अनिवार्य है। लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि गैर-अनुपालन के परिणामस्वरूप अपीलकर्ता को दोष को सुधारने का अवसर दिए बिना अपील को स्वत: अस्वीकृत होना चाहिए। यदि और जब दोष देखा जाता है या इंगित किया जाता है, तो अदालत को स्वत: संज्ञान या अपीलकर्ता के आवेदन पर, अपीलकर्ता को अपील के ज्ञापन पर हस्ताक्षर करके या वकालतनामा प्रस्तुत करके दोष को सुधारने की अनुमति देनी चाहिए। यह भी ध्यान में रखा जाना चाहिए कि यदि अपील ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने वाला अधिवक्ता विचारण न्यायालय में पक्षकार के लिए पेश हुआ है, तो उसे अपील के ज्ञापन के साथ एक नया वकालतनामा पेश करने की आवश्यकता नहीं है, क्योंकि विचारण न्यायालय में दायर उसके पक्ष में वकालतनामा आदेश 3 सीपीसी के नियम 4 (2) सपठित स्पष्टीकरण् (सी) के संबंध में अपील के ज्ञापन पर हस्ताक्षर करने और प्रस्तुत करने के लिए पर्याप्त अधिकार होगा। ऐसी स्थिति में, विचारण न्यायालय में उसे दिए गए अधिकार का उल्लेख करने वाला केवल एक ज्ञापन पर्याप्त हो सकता है। हालांकि, अपील के ज्ञापन के साथ एक नया वकालतनामा दाखिल करना हमेशा कार्यालय के लिए अपील के प्रसंस्करण के लिए सुविधाजनक होगा।

16. इसी तरह का प्रावधान आदेश 6 नियम 14 सी.पी.सी. में पाया जाता है, जिसके लिए आवश्यक है कि प्रत्येक दलील पर पक्षकार और उसके अधिवक्ता द्वारा हस्ताक्षर किए जाएंगे, यदि

कोई हो। यहां भी, यह हमेशा माना गया है कि यदि किसी वादी या उसके विधिवत अधिकृत अभिकर्ता द्वारा किसी भी प्रमाणिक त्रुटि के कारण किसी वादी या उसके विधिवत अधिकृत अभिकर्ता द्वारा हस्ताक्षर नहीं किए जाते हैं, तो त्रुटि को निर्णय से पहले किसी भी समय विचारण न्यायालय द्वारा या यहां तक कि अपीलीय न्यायालय द्वारा उचित संशोधन की अनुमति देकर ठीक करने की अनुमति दी जा सकती है। जब सुनवाई के दौरान ऐसी त्रुटि उसके संज्ञान में आती है।

17. किसी अभिवचन, अपील ज्ञापन या आवेदन या अनुतोष के लिए याचिका से संबंधित किसी भी प्रक्रियात्मक आवश्यकता का अनुपालन न करने पर स्वत: खारिज या अस्वीकृति नहीं होनी चाहिए, जब तक कि संबंधित कानून या नियम द्वारा ऐसा अनिवार्य न हो। प्रक्रियात्मक त्रुटि और अनियमितताएं जिनका निवारण संभव है, उन्हें वास्तविक अधिकारों को पराजित करने या अन्याय का कारण बनने की अनुमति नहीं दी जानी चाहिए। न्याय के उद्देश्य को बढाने वाली प्रक्रिया न्याय के अधीन होती है इसे कभी भी किसी दमनकारी या दंडात्मक उपयोग द्वारा न्याय से इनकार करने या अन्याय को बनाए रखने का उपकरण नहीं बनाया जाना चाहिए। इस सिद्धांत के प्रमुख अपवाद हैं:

(i) जहां प्रक्रिया को निर्धारित करने वाला क़ानून, विशेष रूप से अनुपालन न किये जाने के परिणाम को भी निर्धारित करता है।

(ii) जहां प्रक्रियात्मक दोष को इंगित किए जाने के बाद भी ठीक नहीं किया जाता है और इसे सुधारने के लिए उचित अवसर दिया जाता है;

(iii) जहां गैर-अनुपालन या उल्लंघन जानबूझकर या हानिप्रद साबित होता है;

(iv) जहां त्रुटि का सुधार गुण-दोष के आधार पर मामले को प्रभावित करेगा या न्यायालय के अधिकार क्षेत्र को प्रभावित करेगा।

(v) अपील का ज्ञापन के मामले में, प्राधिकरण का पूर्ण अभाव है और अपील को अपीलकर्ता के ज्ञान, सहमति और अधिकार के बिना प्रस्तुत किया जाता है"

6. माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा भी इसी प्रकार का दृष्टिकोण *विधावती गुप्ता और अन्य बनाम भक्ति हरि नायक और अन्य, (2006) 2 एससीसी 777*. के मामले में अपनाया है निर्णय के पैराग्राफ संख्या 49 को नीचे प्रस्तुत किया गया है: –

> "*इस संबंध में हम श्री मित्रा द्वारा उद्धृत विभिन्न निर्णयों में तीन चार्टर्ड उच्च न्यायालयों के सुसंगत दृष्टिकोण से सहमत हैं कि संहिता के आदेश 6 और आदेश 7 की आवश्यकताएं, प्रकृति में प्रक्रियात्मक होने के कारण, उनके संबंध में कोई भी चूक वाद को अमान्य नहीं बनाएगी और इस तरह के दोष या चूक को न केवल ठीक किया जा सकता है, बल्कि वाद की प्रस्तुति से भी पहले की तारीख होगी। हमारा यह भी विचार है कि मूल पक्ष नियमावली के अध्याय 7 के नियम 1 में संहिता के उपबंधों के संदर्भ की व्याख्या इस प्रकार के संदर्भ को केवल संहिता के उपबंधों तक सीमित करने के लिए नहीं की जा सकती है जैसा कि इस प्रकार के निगमन की तारीख को विधमान थे। मूल पक्ष नियम बनाते समय उच्च न्यायालय का यह स्पष्ट इरादा था कि वाद संहिता के आदेश 6 और आदेश 7 के प्रावधानों के अनुरूप होना चाहिए। आवश्यक निहितार्थ द्वारा संदर्भ भी देना होगा धारा 26 और संहिता का आदेश 4, जो आदेश 6 और आदेश 7 के साथ, मुकदमों के दर्ज होने/संस्थित होने से संबंधित है। हम इस मुद्दे पर श्री प्रदीप घोष के साथ हैं। संहिता के आदेश 4 के नियम 1 के उप-नियम (3) के प्रावधान, जिस पर कलकत्ता उच्च न्यायालय की खंडपीठ ने मजबूत विश्वास रखा था, को भी उस संदर्भ में पढ़ना और समझना होगा। संहिता के आदेश 4 के नियम 1 के उप-नियम (3) में प्रयुक्त "विधिवत" शब्द का अर्थ है कि वाद कानून के*

अनुसार दायर किया जाना चाहिए। हमारे विचार में, जैसा कि इस न्यायालय द्वारा विभिन्न निर्णयों में बार-बार व्यक्त किया गया है, प्रक्रिया के नियम न्याय के उद्देश्य को आगे बढ़ाने के लिए बनाए गए हैं, न कि इसमें बाधा कारित करने के लिए। खयूमसाब और कैलाश दोनों के मामले में, हालांकि संहिता के आदेश 8 नियम 1 के संशोधित प्रावधानों को निर्धारित *करते हुए, इस न्यायालय ने इस हितकारी सिद्धांत की अभिव्यक्ति दी कि प्रक्रियात्मक अधिनियमों को इस तरह से नहीं माना जाना चाहिए जो न्यायालय को विभिन्न स्थितियों में न्याय के उद्देश्य को पूरा करने से रोके।*

7. वादी संख्या 3 (मानव पाठक) द्वारा की गई प्रार्थना, यदि आवेदन में किए गए कथनों की पृष्ठभूमि में देखी जाती है, तो इंगित करता है कि, वादी संख्या 1 के रूप में और वादी सं० 2 के अभिकर्ता के रूप में वादपत्र पर हस्ताक्षर करने वाले सत्य प्रकाश पाठक की मृत्यु के कारण, वाद में एक त्रुटि उत्पन्न हो गई थी, जिसे वादी संख्या 3 द्वारा ठीक करने की मांग की गई थी, जो वाद में अन्य सभी वादियों की ओर से अभिकर्ता के रूप में भी काम कर रहा था। इस प्रकार, वर्तमान मामले में आदेश 6 नियम 14 सी.पी.सी. में निहित प्रावधान का अनुपालन न करना जानबूझकर नहीं कहा जा सकता है।

8. जैसा कि ऊपर कानूनी स्थिति के संबंध में चर्चा की गई है, विचारण न्यायालय द्वारा लिया गया दृष्टिकोण त्रुटिपूर्ण प्रतीत होता है।

9. इस मामले को ध्यान में रखते हुए, दितीय अपर सिविल जज (सीनियर डिवीजन), देहरादून द्वारा दिनांक 22.11.2021 को मूल वाद सं 766 वर्ष 2003 में पारित आदेश अपास्त किया जाता है। रिट याचिका को स्वीकार किया जाता है। याचिकाकर्ताओं का आवेदन संख्या 199 सी 2 विचारण न्यायालय की फाइल में पुन: स्थापित हो जाएगी और विद्वान विचारण न्यायालय इस आदेश की प्रमाणित प्रति पेश करने की तारीख से छह सप्ताह के भीतर विधि के अनुसार आवेदन पर पुनर्विचार करेगा।

(न्यायमूर्ति मनोज कुमार तिवारी)